मैं उनका विनम्र उपासक हूँ

सन्त गोरा कुम्हार ने महात्माओं का एक समारोह आयोजित करने का निश्चय किया, एक ऐसी सभा जिसमें पन्ढरपुर में रहने वाले सन्त, कीर्तन व शास्त्रार्थ के लिए एक साथ एकत्र हो सकते थे। उनमें से अधिकतर साधारण कार्य करने वाले श्रमिक थे - स्वयं गोरा, नरहरि सुनार, सौता माली व सन्त नामदेव की सेविका, जनाबाई। सन्त ज्ञानेश्वर भी अपने दोनो भाईयों, सोपान व निवृत्ति तथा अपनी बहन, महान योगिनी मुक्ताबाई, के साथ वहाँ उपस्थित थे।

जब गोरा सभी सन्तो को उनके स्थानों पर सम्मानपूर्वक बैठा चुके थे, तब ज्ञानेश्वर महाराज ने अपने आयोजक से आँखों में एक शरारती चमक के साथ कहा, "आपने सभी मटकों को उनके स्थान पर रख दिया है। अब कच्चे मटकों को पके हुए मटकों से अलग कीजिए।"

गोरा तुरन्त ही सन्त ज्ञानदेव का प्रयोजन समझ गए। उन्होंने अपनी कुम्हार की छड़ी उठाई और वहाँ पर उपस्थित प्रत्येक सन्त के सिर पर ठक-ठकाना आरम्भ कर दिया। सभी इस ठक-ठक को स्वीकार करते हुए शान्त बैठे रहे, फिर जब सन्त नामदेव जी की बारी आई। नामदेव जी ने उत्तेजित होकर कहा- "आप मुझे क्यों मार रहे हैं?"

गोरा ने कहा, "अरे, यह मटका तो अभी तक कच्चा व अपरिपक्व है।"

इस पर मुक्ताबाई ने शरारतपूर्वक कहा – "गोरा, आप एक निपुण परीक्षक हैं! एक डॉक्टर के समान, आप आसानी से रोग पकड़ लेते हैं, एक ही नज़र में यह बता सकते हैं कि कौन सा मटका पक्का है, और कौन सा कच्चा।" मुक्ताबाई के शब्दों को सुनकर सभी सन्त ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे। लेकिन नामदेव जी के सम्वेदनशील हृदय के लिए यह अपमान असहनीय था।

अपने आँसुओं को छुपाते हुए नामदेव सभा से उठे और शीघ्रता से सीधे मन्दिर की ओर चल दिए और भगवान की प्रतिमा के समक्ष गिर पड़े। अश्रुपूरित स्वर में उन्होंने कहा "हे प्रभु, मेरा बहुत अपमान हुआ है। मेरा मन क्रोध से भरा हुआ है।"

नामदेव को ईश्वर में इतनी श्रद्धा थी कि उनके लिए मूर्ति भी जीवन्त हो उठती थी। अतः ईश्वर हँसे व नामदेव को गले लगा लिया। भगवान ने पूछा "किसने तुम्हारा अपमान किया? मैं तुम्हारा परम प्रिय

मित्र हूँ। कृपया मुझे बताओ क्या हुआ।"

नामदेव ने कहा "ये आपके भक्त गोरा थे। जिन्होंने सन्त जनों की उपस्थिति में मेरे सिर पर ठकठकाया और जब मैंने उन्हें चले जाने को कहा तो मुझे कच्चा मटका कहकर पुकारा। मुक्ताबाई जी ने मेरा परिहास किया और सभी सन्त मुझ पर हँसे यहाँ तक कि सन्त ज्ञानेश्वर भी! "

एक क्षण के लिए भगवान मौन रहे। फिर उन्होंने कहा "अरे! मेरे नामदेव वे जो भी कहते हैं वह सत्य ही तो है। जो भी व्यक्ति किसी गुरु का शिष्य नहीं होता है उसे कच्चा ही कहा जाता है।"

इन शब्दों को सुन कर नामदेव फूट-फूटकर रोने लगे। "हे ईश्वर, यदि आप मुझे सहारा नहीं देंगे तो मैं किसकी शरण में जाऊँगा? यदि आप भी अन्य लोगों की तरह मेरा तिरस्कार करेंगे तो मैं कहा जाऊँगा? यदि माँ बच्चे को त्याग दे तो उसकी देखभाल कौन करेगा?"

भगवान ने उत्तर दिया "मेरा व तुम्हारा हृदय एक है। हम दोनों के बीच कोई द्वैत नहीं है। अब, इस बात का अनुभव करने के लिए, मैं चाहता हूँ कि तुम एक गुरु के पास जाओ, क्यूँकि श्रीगुरु के आशीर्वाद के बिना, भगवान व भक्त के बीच का द्वैत भाव कभी समाप्त नहीं होगा।"

नामदेव रोते हुए बोले, " जब आप मेरे पास हैं तो मुझे श्रीगुरु की क्या आवश्यकता है?"

भगवान ने कहा "सुनो, जब मैंने श्री राम के रूप में अवतार लिया था, तब मैं ज्ञान के लिए गुरु वशिष्ठ के पास गया था। श्री कृष्ण के रूप में, मैं सांदिपनी मुनि के पास गया था। हर एक को गुरु की आवश्यकता होती है। शिव मन्दिर में महान सन्त विशोबा खेचर हैं। वह सन्त ज्ञानेश्वर के शिष्य हैं और वे सभी सद्गुरुओं में अतुलनीय हैं। उनके पास जाओ व उनसे ज्ञान प्राप्त करो।"

पूरी तरह से निराश नामदेव, शिव मन्दिर की ओर चल दिए। जब नामदेव ने द्वार खोला तो उन्होंने देखा सन्त विशोबा खेचर खर्राटे मार कर सो रहे थे और उनके पाँव शिवलिंगम् पर रखे हुए थे। नामदेव को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। उन्हें लगा कि यह उनका घोर अपमान है कि उन्हें एक ऐसे व्यक्ति के पास भेजा गया है, जिन्हें इतना भी ज्ञात नहीं है कि भगवान की प्रतिमा के साथ किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए।

सन्त विशोबा खेचर के पास आते हुए नामदेव ने कहा, "आप अपने आपको एक साधु व सन्त कहते हैं,

फिर भी आपने अपने पाँव भगवान शिव की प्रतिमा पर रखे हुए हैं। क्या आपका यह ब्रह्मज्ञान उचित है?"

विशोबा जी ने एक आँख खोली और नवयुवक की ओर मुस्कुराते हुए देखा। उन्होंने कहा "महाराज, आप सही हैं। मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गई। अब, आपको मेरी सहायता करनी चाहिए। मेरे पाँव उठाइए और जहाँ भगवान शिव का वास नहीं है, उन्हें उस स्थान पर रख दीजिए। मैं इतना वृद्ध व दुर्बल हो गया हूँ कि मैं उन्हें स्वयं हिला भी नहीं सकता।"

नामदेव ने सन्त विशोबा के पैरों को ऊपर उठाया, और उन्हें दूसरी ओर मोड़ कर भूमि पर रखना आरम्भ किया। वह शिवलिंगम् को उसी स्थान पर प्रकट होते हुए देख कर अचम्भित हो गए। पुनः उन्होंने सन्त विशोबा के चरणों को हिलाया। एक और शिवलिंगम् प्रकट हो गया। जहाँ कहीं भी वे वृद्ध सन्त के चरणों को रखने का प्रयास करते, वहीं एक शिवलिंगम् प्रकट हो जाता। नामदेव को बहुत आश्चर्य हुआ। जब उन्होंने सन्त विशोबा के कोमल स्वर को सुना तो उनकी आँखों से प्रेमाश्रुओं की अविरल धारा बहने लगी, "हे! विष्णु भक्त, कृपया मेरे चरणों को नीचे रख दें।"

नामदेव ने कहा, "मैं नहीं रख सकता। जैसे ही मैंने आपके चरणों को ऊपर उठाया तो मैंने अनायास यह देखा कि शिव सर्वत्र हैं। मैं ऐसा कोई स्थान नहीं खोज़ पा रहा हूँ जो शिव रहित हो, तो मैं आपके चरणों को कहाँ रखूँ?"

सन्त विशोबा ने कहा, "उन रूपों को सुनें जिनमें शिव प्रकट होते हैं। उनका मस्तक देवलोक तक व उनके चरण यमलोक तक विस्तृत हैं। कोई भी उनके सर्वव्यापी रूप का वर्णन करने में समर्थ नहीं है। और मैं, सन्त ज्ञानेश्वर का सेवक, उनका विनम्र उपासक हूँ।"

नामदेव ने अपने श्रीगुरु के चरणों में सर नवाया। सन्त विशोबा ने नामदेव के सिर पर अपना हाथ रखा और नामदेव *समाधि* में चले गए। उन्होंने अपने हृदय में देखा कि सन्त विशोबा स्वयं भगवान विठ्ठल का ही स्वरूप हैं। उनके श्रीगुरु व उनके प्रिय प्रभु एक ही हैं। और नामदेव के लिए, अब स्वयं तथा भगवान के बीच कोई अन्तर नहीं रहा था। इसके बाद, जब भी वे भगवान विठ्ठल के बारे में बात करते, तब वे केवल मन्दिर में स्थित मूर्ति के बारे में ही नहीं, अपितु वे उन सर्वव्यापी ईश्वर के बारे में बात कर रहे होते जिनका अनुभव वे सर्वत्र करते थे।

©२०१६ एस.वाय.डी.ए. फ़ाउण्डेशन® सर्वाधिकार सुरक्षित।